"प्रस्थिति व्यक्ति का वह पद है जिसे व्यक्ति किसी समूह में अपने लिंग, परिवार, धर्म, व्यवसाय, विवाह एवं उपलब्धियों के आधार पर प्राप्त करता है। कार्य वह भूमिका है जिसे वह किसी पद के प्राप्त होने के कारण सम्पादित करता है।"
—इलियट तथा मैरिल

प्रस्थिति (स्थिति)
(STATUS)

मानव किसी-न-किसी समाज में अवश्य जन्म लेता है और इस समाज में संगठन व व्यवस्था का होना अ आवश्यक है, परन्तु समाज में संगठन तभी कायम रह सकता है जब व्यक्ति सहित समाज के विभिन्न निर्माण भाग या इकाइयाँ अपने-अपने स्थान पर रहते हुए एक-दूसरे से सम्बन्ध बनाये रखकर अपने-अपने कार्यों करती रहें। सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्था में व्यक्ति के निश्चित स्थान को उसकी **प्रस्थिति, स्थिति या** (status) कहते हैं और इस प्रस्थिति या पद से सम्बन्धित वे क्रियाएँ (functions), जोकि दूसरों से सम्बद्ध हैं, उसका कार्य व भूमिका (role) मानी जाती हैं। किसी भी समाज में प्रत्येक व्यक्ति की एक या एकाधि प्रस्थितियाँ होती हैं, यहाँ तक कि नवजात शिशु की भी परिवार के एक 'नये मेहमान' के रूप में एक प्रस्थिति पद होता है। बड़ा होकर वही समाज में एकाधिक प्रस्थितियाँ या पद प्राप्त कर लेता है—वह पिता, पति, चाचा, ताऊ, मामा, स्कूल का प्रधानाचार्य, वकील या किसी राजनीतिक दल का सदस्य बन सकता है। उन प्रस्थितियों (statuses) के साथ कुछ-न-कुछ क्रियाएँ अवश्य जुड़ी रहती हैं। दूसरे शब्दों में, प्रत्येक स्थिति सम्बन्धित कुछ निश्चित कर्तव्य या भूमिकाएँ (roles) होती हैं जिनके निभाये जाने की उस व्यक्ति से समाज अ करता है। इन भूमिकाओं या कर्मों का क्या स्वरूप होगा? क्या प्रकृति और क्या क्षेत्र होगा? इसका निर्धारण समाज की संस्कृति के द्वारा होता है जिसमें वह व्यक्ति विशेष निवास करता है। यदि किसी व्यक्ति को पति प्रस्थिति या स्थिति प्राप्त है तो यह मानी हुई बात है कि उसे पति की कुछ भूमिकाओं को निभाना ही पड़ेगा और के रूप में उसकी क्रियाएँ उन क्रियाओं से पर्याप्त भिन्न होंगी जो कि पुत्र के रूप में हैं, परन्तु पति के रूप में भी परिवार के एक 'शासक' के रूप में कार्य करेगा या पत्नी के एक 'पालतू पशु' की भाँति—इसका निर्धारण संस्कृ ही करेगी। उदाहरणार्थ, हिन्दू पति परिवार का 'सब कुछ' या प्रधानमन्त्री होता है, परन्तु थारू जनजाति के कु गोत्रों में पति को पत्नी के 'प्रधान सेवक' की भूमिका निभानी पड़ती है। यही 'प्रस्थिति और भूमिका' इस अध्य का विषय है।

प्रस्थिति, स्थिति या पद का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Status)

उपर्युक्त विवेचना से यह स्पष्ट ही है कि प्रत्येक समाज, चाहे वह आधुनिक हो या आदिम, अपने सदस्यों लिए कुछ निश्चित स्थिति तथा कार्य निर्धारित करता है। **श्री सार्जेण्ट** (Sargent) ने लिखा है कि यद्यपि स्थि तथा कार्य, विशेषकर कार्य की अवधारणा का, सामाजिक विज्ञान के साहित्य में, बहुत पहले से ही प्रयोग हो आया है परन्तु वर्णन तथा विश्लेषण के उपयोगी उपादानों के रूप में इन अवधारणाओं के प्रयोग का मुख्य श्रे प्रसिद्ध मानवशास्त्री **श्री लिण्टन** (Linton) को ही है। वास्तव में जैसा **सर्वश्री इलियट** तथा मैरि (*Elliott and Merrill*) ने लिखा है, "**किसी व्यक्ति की स्थिति का तात्पर्य उन पद** (position) से है

Scanned with CamScanner

वह समूह में अपने लिंग (sex), आयु, परिवार, वर्ग, व्यवसाय, विवाह और उपलब्धियों (achievements) के आधार पर प्राप्त करता है और कार्य वह भूमिका है जिसे वह किसी विशेष पद के प्राप्त होने के कारण सम्पादित करता है।"[1] इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति को कम-से-कम एक स्थिति या पद अवश्य प्राप्त होता है क्योंकि वह अपने माता-पिता की सन्तान है, पुरुष अथवा स्त्री है; युवक, बच्चा या वृद्ध है; विवाहित अथवा अविवाहित है; कृषक या पुजारी है अथवा राजा या प्रजा है। इन स्थितियों से सम्बन्धित कुछ-न-कुछ कार्य भी ऐसे होते हैं जिन्हें वह अपनी स्थिति के कारण करता रहता है। न पुजारी और कृषक का कार्य एक-सा होता है, न पुरुष और स्त्री का और न पिता और पुत्र का क्योंकि इन सभी की स्थिति भी एकसमान नहीं होती।

श्री लिण्टन (Linton) स्थिति की परिभाषा करते हुए लिखते हैं, "**किसी व्यवस्था विशेष में किसी व्यक्ति विशेष को किसी समय विशेष में जो स्थान प्राप्त होता है, वही उस व्यवस्था के सन्दर्भ में उस व्यक्ति की स्थिति कहलायेगी।**"[2] **सर्वश्री ऑगबर्न** और **निमकॉफ** (Ogburn and Nimkoff) ने स्थिति को अति सरल शब्दों में परिभाषित किया है। आपके शब्दों में, "**स्थिति की सबसे अधिक सरल परिभाषा यह है कि यह समूह में व्यक्ति के पद का प्रतिनिधित्व करती है।**"[3]

उपर्युक्त विवेचना से यह स्पष्ट है कि सामाजिक संगठन को बनाये रखने के लिए अथवा सामाजिक संरचना को एक स्थिर रूप देने के लिए यह आवश्यक होता है कि समाज के प्रत्येक सदस्य के लिए एक निश्चित 'स्थान' या 'पद' (position) दूसरे सदस्यों के सन्दर्भ में निर्धारित कर दिया जाये। यह स्थान या पद समाज या समूह में व्यक्ति की 'स्थिति' होती है। अत: यह कहा जा सकता है कि किसी भी व्यक्ति की स्थिति सदैव ही अन्य व्यक्तियों की स्थिति के सन्दर्भ में होती है। यदि केवल एक ही व्यक्ति है तो स्थिति का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। अत: हम कह सकते हैं कि **दूसरे व्यक्तियों के सन्दर्भ में एक समाज या समूह के अन्दर व्यक्ति को जो स्थान या पद प्राप्त होता है, उसी को उसकी स्थिति कहते हैं।** चूँकि एक ही समाज या समुदाय में अनेक समूह होते हैं और उनमें से बहुतों का सदस्य एक व्यक्ति हो सकता है, अत: एक ही व्यक्ति की अनेक स्थितियाँ (statuses) हो सकती हैं।

परन्तु इस सम्बन्ध में एक बात यह याद रखनी चाहिए कि समाज या समुदाय में व्यक्ति को जो अनेक स्थितियाँ प्राप्त होती हैं, उन अनेक स्थितियों में एक मुख्य स्थिति (key status) होती है और इस मुख्य स्थिति का प्रभाव उस व्यक्ति की अन्य स्थितियों पर अत्यधिक पड़ता है। उदाहरणार्थ, एक व्यक्ति की मुख्य स्थिति मुख्यमन्त्री का पद है। स्पष्ट है कि मुख्यमन्त्री पद के साथ जो प्रतिष्ठा जुड़ी हुई है, उसका प्रभाव उस व्यक्ति की अन्य स्थितियों पर भी पड़ेगा। अर्थात् क्लब, कला परिषद, सेवा संगठन आदि दूसरे क्षेत्रों में भी उस व्यक्ति की योग्यता कम होते हुए भी उसे साधारणतया उच्च स्थिति स्वत: ही प्राप्त हो जायेगी। इसके विपरीत यदि एक व्यक्ति की मुख्य स्थिति 'क्लर्क' (clerk) है तो उसे क्लब, राजनीति और दूसरे क्षेत्रों में भी साधारणतया उच्च स्थिति नहीं मिलेगी क्योंकि लोग उसकी मुख्य स्थिति के सन्दर्भ में ही उसकी योग्यता का अनुमान लगायेंगे जब तक कि वह अपनी योग्यता को विशेष रूप से प्रदर्शित करने में सफल न हो। वास्तव में, **दूसरों के लिए एक व्यक्ति 'क्या है' अथवा दूसरों के विभाग में एक व्यक्ति के लिए क्या जगह है, इसी की अभिव्यक्ति उस व्यक्ति की स्थिति है। श्री फिचर** (J.H. Fichter) ने उचित ही लिखा है कि "**व्यक्ति की स्थिति एक मानसिक तथ्य है, उस व्यक्ति के प्रति एक-समाज के लोग जिस मात्रा में सम्मान या असम्मान का प्रदर्शन करते हैं, वही उसकी स्थिति है।**"[4] उदाहरणार्थ, एक व्यक्ति को, 'पिता' मात्र कह देने से ही परिवार से उसकी वास्तविक स्थिति का पता नहीं चलता जब तक हमें इस बात का भी पता न चले कि उस 'पिता' या व्यक्ति के प्रति उस परिवार के सदस्यों के मन में कितनी सम्मान या असम्मान की भावना है? सब लोग उसका आदर करते हैं, उसके निर्देशों को मानते हैं

Scanned with CamScanner

तो उस अवस्था में उस व्यक्ति की स्थिति जो होगी, वह कदापि उस
व्यक्ति उसकी परवाह तक नहीं करता। अत: एक व्यक्ति की वास्तविक स्थिति को दूसरे लोगों के दृष्टिकोण
सन्दर्भ में ही समझा जा सकता है।

प्रस्थिति तथा कार्य के आवश्यक तत्व (Essential Elements of Status and Role)

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर प्रस्थिति और कार्य के कुछ आवश्यक तत्वों को इस प्रकार प्रस्तुत किया
सकता है—

(1) प्रस्थिति तथा कार्य का प्रथम आवश्यक तत्व यह है कि इन दोनों का निर्धारण सामाजिक व्यवस्था
अन्तर्गत सांस्कृतिक कारकों के द्वारा होता है। सांस्कृतिक परिस्थिति के अनुसार ही प्रत्येक व्यक्ति को
व्यवस्था के अन्तर्गत एक या एकाधिक 'स्थान' (position) प्राप्त होते हैं और सांस्कृतिक मूल्यों (cultu
values) के अनुसार उस 'स्थान' से सम्बन्धित कुछ भूमिकाओं का निर्धारण होता है। इसी स्थान को 'स्थिति'
इन्हीं भूमिकाओं को 'कार्य' की संज्ञा दी जाती है।

(2) प्रस्थिति एवं कार्य की अवधारणा को दूसरे व्यक्तियों के सन्दर्भ ही में समझना उचित होगा। दूसरे श
में, जब तक दूसरे व्यक्तियों की स्थिति या कार्यों को ध्यान में नहीं रखा जायेगा, तब तक किसी एक व्यक्ति
स्थिति तथा कार्य को नहीं समझा जा सकेगा। इसका कारण भी स्पष्ट है और वह यह है कि प्रत्येक व्यक्ति की स्थि
तथा कार्य दूसरे व्यक्तियों की स्थितियों तथा कार्यों से सम्बन्धित होते हैं तथा उनके द्वारा प्रभावित होते हैं। यदि स
के अन्य सदस्यों की कोई स्थिति तथा कार्य न हो तो व्यक्ति की स्थिति तथा कार्य का भी कोई प्रश्न नहीं उठे

(3) प्रस्थिति तथा कार्य का तीसरा आवश्यक तत्व यह है कि स्थिति समान होते हुए भी उस स्थिति
सम्बन्धित कार्यों की अभिव्यक्ति प्रत्येक व्यक्ति पृथक्-पृथक् ढंग से कर सकता है। उदाहरणार्थ, 'अ' पत्नी के
में जो कार्य करती है, 'ब' भी पत्नी के रूप में वही कार्य करेगी, यह निश्चित या आवश्यक नहीं। फिर भी स
या समूह की प्रत्याशा सभी पत्नियों में बहुत कुछ समान ही होती है। प्रत्येक पत्नी से यह आशा की जाती है कि
अपने पति की सेवा-सुश्रुषा के लिए सभी कार्य करेगी और उसे खुश रखेगी, बच्चों का पालन-पोषण और घर
देखभाल करेगी इत्यादि। उसी प्रकार राष्ट्रपति लोकसभा के सदस्यों से विभिन्न नीतियों के निर्धारण में सहायता
आशा करते हैं। अत: सामाजिक आकांक्षाओं के सन्दर्भ में किसी भी व्यक्ति के पद तथा कार्य को अधिक स
रूप में समझा जा सकता है।

(4) प्रस्थिति समाज में व्यक्ति के सम्पूर्ण सामाजिक पद का केवल एक अंश होती है। यही कारण है कि
समाज में व्यक्ति केवल एक स्थिति ग्रहण नहीं करता बल्कि अनेक स्थितियाँ प्राप्त करता है तथा अपनी वैयक्तिक
योग्यता, क्षमता, ज्ञान और अनुभव के आधार पर सभी स्थितियों तथा कार्यों के बीच समानता, सामीप्य त
सम्बन्ध बनाये रखता है। इसलिए **प्रोफेसर डेविस** (K. Davis) के अनुसार पद अनेक स्थितियों का समू
अथवा एक ऐसा पुंज (cluster) होता है जिसको सामान्य रूप से अन्य व्यक्ति भी जानते-समझते हैं।

(5) प्रस्थिति तथा उससे सम्बन्धित कार्यों के आधार पर सम्पूर्ण समाज विभिन्न समूहों में बँट जाता है। इस
से प्रत्येक समूह को एक विशेष स्थिति-समूह कहा जाता है। स्थिति-समूह किसी भी सामाजिक संरचना का प्रमु
अंश होता है तथा सामाजिक विशेषताओं को स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध होता है। एक ही स्थिति-समूह के
व्यक्तियों का दृष्टिकोण समान होता है। उनकी समस्याएँ तथा स्वार्थ भी समान होते हैं। कभी-कभी इसी आधार प
वे दूसरे स्थिति-समूहों से अपनी रक्षा के कुछ सामाजिक नियम बना लेते हैं। उदाहरणार्थ, पूँजीपति स्थिति-समू
से अपनी रक्षा के लिए श्रमिक वर्ग कुछ विशेष उपाय अपनाता है। इस सामूहिक स्वार्थ-रक्षा की भावना के कार
ही स्थिति-समूह में संगठन की भावना पायी जाती है।

(6) प्रस्थिति और कार्य के सम्बन्ध में एक अन्य उल्लेखनीय बात यह है कि प्रत्येक व्यक्ति की स्थिति के साथ
एक विशेष मूल्य (value) होता है जिसे 'स्थिति की प्रतिष्ठा' (prestige of status) कहा जाता है। इस मूल्य
या प्रतिष्ठा का निर्धारण संस्कृति के द्वारा ही होता है। कहीं 'माँ' का महत्व केवल जन्मदात्री के रूप तक ही सीमित
है। बड़े लड़के की स्थिति के साथ जो मूल्य या प्रतिष्ठा हिन्दू-समाज में जुड़ी रहती है, वह इस्लाम संस्कृति में महत्व
नहीं है। वास्तव में व्यक्ति की स्थिति को उच्च अथवा निम्न समझने के साथ ही उसको दी जाने वाली प्रतिष्ठा की
प्रकृति में भी अन्तर आ जाता है। चूँकि परम्परागत रूप में जाति-प्रथा के अन्तर्गत हरिजनों की स्थिति को निम्न
समझा जाता रहा है। इस कारण हरिजनों की सामाजिक प्रतिष्ठा भी निम्न स्तर की हो रही है पर अब चूँकि उनकी

Scanned with CamScanner

स्थिति को भी अन्य व्यक्तियों के समान बनाये जाने की प्रवृत्ति बढ़ रही है, अतः उनकी स्थिति की प्रतिष्ठा भी बढ़ती जा रही है।

(7) इस सम्बन्ध में यह भी उल्लेखनीय है कि यह आवश्यक नहीं है कि सभी व्यक्ति अपनी प्रत्येक प्रस्थिति से सम्बन्धित सारे कार्यों को उचित प्रकार से ही करें। इस सम्बन्ध में एक ही व्यक्ति में या विभिन्न व्यक्तियों में अन्तर हो सकता है। 'एक ही व्यक्ति का अन्तर' का अर्थ यह है कि हो सकता है कि एक व्यक्ति 'पिता' के रूप में अपने सभी कार्यों या कर्तव्यों को पूर्ण उचित ढंग से निभाता हो, पर दफ्तर के अधिकारी के रूप में लापरवाही बरतता हो। इसी प्रकार यह अन्तर विभिन्न व्यक्तियों के बीच में भी हो सकता है। एक व्यक्ति शिक्षक के कर्तव्यों का पालन अनुत्तरदायी ढंग से करता है; पर दूसरा व्यक्ति वही कार्य बड़ी जिम्मेदारी एवं लगन के साथ करता है। समाज या समूह की दृष्टि से या मानसिक प्रत्याशाओं के अनुरूप, जो व्यक्ति उचित ढंग से जितना कार्य करता है, उसे उतना सम्मान मिलता है। इस प्रकार एक स्थिति से सम्बन्धित सांस्कृतिक मूल्य को प्रतिष्ठा (Prestige) कहते हैं, जबकि उस प्रतिष्ठा के निर्वाह में सफलता के आधार पर व्यक्ति को सम्मान प्राप्त होता है। इस दृष्टि से विश्वविद्यालय के सभी प्राध्यापकों की स्थिति तथा प्रतिष्ठा समान हो सकती है, परन्तु यह आवश्यक नहीं कि उनमें सभी प्राध्यापकों को समान रूप में सम्मान भी प्राप्त हो। वे अपने कार्यों को उत्तरदायित्व पूर्ण ढंग से पूरा कर रहे हैं या उनके मामले में लापरवाही बरत रहे हैं, इस आधार पर उन्हें भिन्न-भिन्न मात्रा में सम्मान प्राप्त होगा।

(8) उच्च से निम्न स्थिति और प्रतिष्ठा के आधार पर समाज के सदस्य विभिन्न श्रेणियों (rank) में बँट जाते हैं। ये श्रेणियाँ या तो उदग्र रूप में (vertically) अथवा क्षैतिज रूप में (horizontally) समाज में संस्तरण (hierarchy) तथा विभेदीकरण (differentiation) की परिस्थिति उत्पन्न करती हैं। विभिन्न जातियों में उच्च से निम्न स्थिति का विभाजन उदग्र संस्तरण का उत्तम उदाहरण है, जबकि विभिन्न भाइयों में स्थिति और प्रतिष्ठा का विभेद क्षैतिज संस्तरण की ओर ही निर्देश करता है।

(9) स्थिति और कार्य के सम्बन्ध में एक अन्तिम पर अति महत्वपूर्ण बात यह है कि न तो व्यक्ति सम स्थितियों को प्राकृतिक या परम्परागत रूप में प्राप्त करता है और न ही वह सभी स्थितियों को अपनी योग्यता अर्जित करता है। स्थिति तथा कार्य की अवधारणाओं का सामाजिक व्यवस्था में इस कारण महत्वपूर्ण स्थान है वे सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत व्यक्तियों के सम्बन्धों को स्थायी तथा सुव्यवस्थित रूप प्रदान करती सामाजिक व्यवस्था चूँकि अंशतः प्राकृतिक तथा अंशतः मनुष्यकृत होती है, इस कारण इसके अन्तर्गत स्थिति अवधारणा भी पूर्णतया मनुष्य के निजी प्रयत्नों पर ही आधारित न होकर स्वाभाविक या परम्परागत रूप में होने वाली स्थितियों से सम्बन्धित रहती है। दूसरे शब्दों में, व्यक्ति केवल इसी कारण बहुत-सी स्थितियाँ प्राप्त करता कि उसने स्वयं को उन स्थितियों के योग्य बना लिया है, बल्कि इसलिए भी कि परम्परागत रूप पारिवारिक आधार पर उसे अपने-आप कुछ स्थितियाँ मिल जाती हैं। प्रथम प्रकार की स्थितियों को (achieved) तथा दूसरे प्रकार की स्थितियों को 'प्रदत्त' (ascribed) कहते हैं।

Scanned with CamScanner